Research Reinforcement | A Peer Reviewed International Refereed Journal | ISSN 2348-3857
Vol. 9, Issue 2 | November 2021 - April 2022 | pp. 157-164

हरित संघवाद

मीना धीवां

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान)

Research Reinforcement
ISSN 2348-3857

शोध सारांश

हरित संघवाद एक नवीन अवधारणा है। वर्तमान शताब्दी में पर्यावरणीय मुद्दे तेजी से प्रासंगिक होते जा रहे हैं क्योंकि वैश्वीकरण की प्रक्रिया हमारे परिवेश पर मानवीय प्रभाव को बढ़ाती है। जिस तरह से समाज उन परिस्थितियों को आकार देता है जिनमें हम रहते हैं। आस-पास के प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करते हैं। जिस तरीके से राष्ट्रीय सरकारें इस प्रक्रिया का प्रबंधन करती हैं, वह राज्य निर्माण का एक मूलभूत तत्व है। पर्यावरण न केवल भौतिक, आर्थिक, सामाजिक आयामों को समाहित करता है वरन वैश्विक व स्थानीय मुद्दों को भी समाहित करता है। नवीन पर्यावरण नीतियों का विकास अभी शुरू हुआ है क्या यह नीतियाँ हरित संघवाद को चरितार्थ करेंगी। कार्बन टैक्स, तकनीकी हस्तांतरण, वित्तीय कोष जैसी अवधारणा प्रभावी रूप से यह दर्शाती है कि कैसे हरित संघवाद नवीन नीति के विकास व क्रियान्वयन में योगदान कर सकता है? भारत में वित्त आयोग द्वारा राज्यों के कर हस्तांतरण में वन क्षेत्रफल को आधार बनाना, नीति आयोग द्वारा जारी अनेक इंडेक्स यह दर्शाते हैं कि पर्यावरण समस्या के समाधान में संघवादी शासन प्रणाली कहाँ तक सहायक है। केन्द्र सरकार द्वारा निर्मित राष्ट्रीय पर्यावरणीय नीतियों को लागू करने में राज्य व स्थानीय शासन हरित व समावेशी विकास प्राप्त करने में कहाँ तक सफल हुआ है। प्रस्तुत लेख में भारत जैसी संघात्मक शासन प्रणाली वाले देशों के समक्ष उत्पन्न चुनौतियों की समीक्षा की गई है।

संकेताक्षर— *हरित संघवाद, सतत विकास, पर्यावरण, सहयोगी संघवाद*

प्रस्तावना

भारतीय संविधान में शासन का संघात्मक स्वरूप अपनाया गया है। संघात्मक शासन एक गतिशील अवधारणा है। वैश्वीकरण, उदारीकरण के पश्चात् व उत्तर आधुनिक समाज की अवधारणा के आने के पश्चात् हरित संघवाद की अवधारणा सामने आयी। जलवायु परिवर्तन वैश्विक समुदाय के सामने महत्त्वपूर्ण चुनौती है। जलवायु समस्या आर्थिक विकास और ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन के संयुक्त विकास से उत्पन्न होती है क्योंकि राष्ट्रों ने उच्च आर्थिक मानकों को हासिल करने के लिए पर्यावरण और सामाजिक मानकों से समझौता किया है। वर्तमान विकास मॉडल आंतरिक रूप से हानिकारक होने के कारण विशाल संसाधनों का उपयोग करता है। आज एक बिलियन से अधिक लोग कुपोषित हैं और जीवाश्म ईंधन विश्व अर्थव्यवस्था में उपयोग की जाने वाली वाणिज्यिक ऊर्जा का लगभग 95 प्रतिशत प्रदान करते हैं। विश्व अनेक महत्त्वपूर्ण पर्यावरणीय खतरों जैसे मिट्टी, पानी और संसाधनों का क्षरण, खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए प्रयुक्त होते बायो-फर्टीलाइजर, व्यापक स्वास्थ्य के लिए खतरनाक बायो-गैस अपशिष्ट आदि (वर्तमान में कोविड-19 के दौर में अत्यधिक उत्पन्न हुआ)। जैव विविधता का नुकसान, ओजोन मंडल का क्षरण (1985), चेरनोबिल (1986), फुकुशिमा परमाणु हादसा (2011) के अलावा व्यापक रूप से बढ़ती गरीबी, मानवीय समस्याएँ, अत्यधिक जनसंख्या वृद्धि से संसाधनों का अंधाधुंध दोहन, गर्म होते ग्लेशियर, समुद्रतट के पास स्थित देशों का समुद्र में डूबने का खतरा, इत्यादि चुनौतियाँ बढ़ रही हैं। ये बदलाव

सम्पूर्ण वैश्विक स्तर पर देखे जा रहे हैं। पर्यावरणीय मुद्दे स्थानीय स्तर से लेकर विभिन्न क्षेत्राधिकारों तक फैले हुए हैं। सतत विकास को प्राप्त करने के लिए विकेन्द्रीकृत शासन प्रणाली समय की मांग है। साथ ही सार्थक जलवायु नीतियाँ तैयार करने के लिए केन्द्र सरकार व राज्यों के बीच सहयोग के साथ युद्ध स्तर पर पर्यावरणीय समस्याओं से जुड़ने की आवश्यकता है। संघीय संरचनाएँ शासन की नीतिगत जटिलताओं को बनाए रखते हुए स्थानीय इकाइयों की स्वायत्तता व संवैधानिक प्रावधानों के तहत कार्य करती हैं, इसलिए एक संघीय संदर्भ में जलवायु परिवर्तन की एक प्रमुख चुनौती को स्थानीय सीमाओं से परे सोचने की आवश्यकता है लेकिन फिर भी वह स्थानीय होना चाहिए। वर्तमान लेख का उद्देश्य हरित संघवाद के गुणों की पहचान करने के लिए योजना बनाने व उसको क्रियान्वित करने को प्रेरित करना है। हरित संघवाद का सिद्धान्त एक नियामक संरचना की ओर इशारा करता है और संघवाद में सरकार के विकेन्द्रीकृत स्तर पर स्थानीय सरकारें शमन (परिवहन, निर्माण, सार्वजनिक सेवा प्रावधान, स्थानीय नियमन) और अनुकूलन (सामाजिक सुरक्षा, आपदा जोखिम में कमी, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन) के लिए महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में राष्ट्रीय नीतियों को लागू करने के प्रभारी होते हैं। चूंकि ये सरकारें नागरिकों के करीब हैं, इसलिए वे सार्वजनिक जागरूकता बढ़ा सकती हैं। इसके अलावा सरकार की समग्र जवाबदेही सभी स्थानीय सरकारों की उपयुक्त प्रतिक्रियाओं और प्रभावशीलता पर आधारित होती है।

संवैधानिक प्रावधान

भारत का संविधान जिसे दुनिया के सबसे बड़े ''संघीय'' संविधान के रूप में भी जाना जाता है। यह ''संघीय'' शब्द का उपयोग करने से परहेज करता है और इसके बजाय भारत को ''राज्यों के संघ'' के रूप में वर्णित करता है। संघीय राज्य की शास्त्रीय परिभाषा ''एक ऐसा राज्य जिसमें सामान्य और क्षेत्रीय अधिकारियों के बीच शक्तियों का विभाजन होता है, जिनमें से प्रत्येक अपने क्षेत्र में दूसरों से स्वतंत्र व स्वायत्त रहे और घटक इकाई 'राज्य' होगी लेकिन 'संघ' एक प्रमुख भूमिका निभाएगा।[1] इस संवैधानिक व्यवस्था में देश की एकता व अखण्डता बनाए रखने और देश के सर्वांगीण सामाजिक, आर्थिक विकास के लिए एक सुनियोजित और समन्वित रणनीति का पालन करने में सक्षम होने के लिए केन्द्र सरकार को प्रमुख शक्तियाँ और जिम्मेदारी दी गई है। यद्यपि संविधान पर्यावरण की दृष्टि से अंधा था और शासन के संघीय रूप को स्पष्ट रूप से अपनाने के लिए राजनीतिक रूप से संवेदनशील था। इसने सभी प्राकृतिक संसाधन जैसे भूमि, जल, वन और खनिज संसाधन राज्यों को सौंपकर और भूमिका को सीमित करके संघीय सिद्धांतों का सम्मान किया। यद्यपि भारत के संविधान में 'पर्यावरण' शब्द का उपयोग नहीं हुआ था। यहाँ तक कि संविधान के भाग-4 जो राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों की गणना करता है, पर्यावरण से सम्बन्धित किसी भी मामले पर कोई सामान्य या विशिष्ट सिद्धान्त या निर्देश करने से परहेज करता है। यद्यपि वैश्विक स्तर पर 1970 के दशक में पर्यावरण संरक्षण पर अनेक प्रयास किये जाने लगे। 1972 में संयुक्त राष्ट्र के निर्देशन में स्टॉकहोम सम्मेलन आयोजित किया गया। अमेरीकी राष्ट्रपति निक्सन ने 1970 में राष्ट्रीय पर्यावरण नीति अधिनियम पर हस्ताक्षर किये और कई और कानूनों का निर्माण किया जैसे स्वच्छ जल अधिनियम,स्वच्छ वायु अधिनियम आदि।

इनसे आधुनिक पर्यावरणीय मानकों की नींव पड़ी। यूरोपीय संघ में भी पर्यावरण कार्रवाई कार्यक्रम को 1973 में अपनाया गया था और तब से पर्यावरण संरक्षण के सभी क्षेत्रों में फैले कानूनों का एक नेटवर्क विकसित हुआ है। भारत इन घटनाओं से अछूता नहीं रह सका, भारत का राजनीतिक नेतृत्व पर्यावरण के लिए प्रतिबद्ध रहा और पर्यावरण को सतत विकास के मुद्दों से जोड़ने में अग्रणी भूमिका निभाई। पूर्व प्रधानमन्त्री इंदिरा गांधी ने स्टॉकहोम शिखर सम्मेलन में भाग लिया और अपने प्रसिद्ध भाषण ''गरीबी सबसे बड़ा प्रदूषक है'' में पर्यावरण के साथ गरीबी के मुद्दों को जोड़ने के लिए एक जोशीला अनुरोध किया और पर्यावरण संरक्षण और सुधार के लिए भारतीय संविधान के अनुच्छेद 48 में 48 'क' जोड़ा गया। जो यह उपबंध करता है ..... ''राज्य देश के पर्यावरण में संरक्षण तथा संवर्द्धन का तथा वन्य जीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगा।'' इस संविधान संशोधन के साथ अन्य परिवर्तन भी किए गए। द्वितीय परिवर्तन जिसमें कि जंगल और जंगली जानवरों और पक्षियों की सुरक्षा को राज्य सूची से हटाकर समवर्ती सूची में शामिल किया गया जिसका अर्थ है कि केन्द्र व राज्य सरकार दोनों इस विषय पर कानून बना सकते हैं। राज्य के कानूनों और केन्द्रीय कानूनों के बीच संघर्ष के मामले में केन्द्र का कानून मान्य होगा।

साथ ही मौलिक कर्त्तव्यों का अनुच्छेद 51ए को संविधान के भाग '4ए' शामिल किया गया और उसमें 51ए(एफ) में कहा गया कि ''.... प्राकृतिक पर्यावरण की जिसके अन्तर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव है, रक्षा करे और उसका संवर्द्धन करे तथा प्राणीमात्र के प्रति दयाभाव रखें।'' का प्रावधान किया गया। ये सभी संशोधन बहुत महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि पहली बार ''पर्यावरण'' को संवैधानिक मान्यता मिली। संविधान में व्यक्त प्रावधानों ने राज्य और नागरिकों दोनों को पर्यावरण की रक्षा और सुधार करने का आदेश दिया। केन्द्र सरकार को वनों तथा वन्य जीवों पर कानून बनाने के लिए अधिकृत किया गया, इन संशोधनों ने पर्यावरण पर कानूनों की बाढ़ के द्वार खोल दिये। 1970 के दशक से पहले, भारत में पर्यावरण पर केवल दो प्रमुख कानून थे—वन अधिनियम, 1927 जिसे ब्रिटिश औपनिवेशिक हितों की सेवा के लिए पारित किया गया था और कारखाना अधिनियम 1948, जिसे ब्रिटिश संसद द्वारा मजदूरों के स्वास्थ्य की रक्षा के लिए पारित किया गया था।

भारत ने 1952 में अपनी पहली राष्ट्रीय वन नीति तैयार की जिसे बाद में 1988 में संशोधित किया गया था और अन्ततः 2006 में पर्यावरण पर एक राष्ट्रीय नीति जारी की गई थी। इनमें से किसी भी नीति ने नीतियों के कार्यान्वयन में केन्द्र सरकार की तुलना में राज्य की भूमिका के मुद्दे को महत्त्वपूर्ण रूप से नहीं उठाया। इस मुद्दे पर 1988 की राष्ट्रीय वन नीति का एकमात्र संदर्भ है। सरकार द्वारा प्रबंधन योजना को मंजूरी दिए बिना किसी भी वन क्षेत्र में काम करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए, जो एक निर्धारित प्रारूप में और राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार होना चाहिए। केन्द्र सरकार को इस सम्बन्ध में राज्य सरकारों को आवश्यक दिशा-निर्देश जारी करना चाहिए और अनुपालन की निगरानी करनी चाहिए।

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006 में पर्यावरण की यह व्यापक परिभाषा दी गई है, जिसमें राष्ट्रीय वन नीति 1988 तथा पर्यावरण एवं विकास पर वक्तव्य, 1992 और प्रदूषण उपशमन नीति वक्तव्य, 1992 में निहित सभी के प्रावधान शामिल हैं।

कुछ अन्य नीतियाँ जैसे राष्ट्रीय कृषि नीति, 2000, राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000, राष्ट्रीय जलनीति 2000 ने भी योगदान दिया है। इन सभी नीतियों के अन्तर्गत सम्बन्धित विभिन्न सेक्टरों के विशिष्ट संदर्भों में अविच्छिन्न विकास की आवश्यकता को मान्यता दी गई है तथा देश के समूचे राजनीतिक परिदृश्य में प्राकृतिक संसाधनों द्वारा उनके पारिस्थितिकीय सेवाएँ प्रदान करने के साथ-साथ आजीविका उपलब्ध कराने में निभाई गई महत्त्वपूर्ण भूमिका को भी पहचान मिली है। राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006 में 'विकेन्द्रीकरण' के सम्बन्ध में प्रावधान शामिल है।[2]

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2006 से पहले के कुछ विशिष्ट अधिनियमों के प्रावधान

- वन्यजीव संरक्षण अधिनियम 1972: यह 42वें संशोधन से पहले का है, और यह अनुच्छेद 252 के तहत 11 राज्यों के विधायी प्रस्तावों पर आधारित था। अनुच्छेद 252 के तहत संसद को दो या दो से अधिक राज्य एक सामान्य कानून पारित करने के लिए सम्बन्धित राज्य की विधानसभाएँ ऐसा अनुरोध करती है।
- जल (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम 1974 (एक केन्द्रीय अधिनियम): यह अधिनियम 12 राज्यों के विधायी प्रस्तावों पर आधारित है 'पानी' एक राज्य का विषय है। हालांकि 'प्रदूषण' एक अवशिष्ट विषय, इस प्रकार केन्द्र सरकार द्वारा पारित अधिनियम।
- वायु (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1981: केन्द्र सरकार ने 1972 में स्टॉकहोम सम्मेलन में शामिल दायित्वों का उल्लेख किया। भले ही इस सम्मेलन में कोई कठोर प्रावधान नहीं हुए लेकिन यह सम्मेलन देशों को पर्यावरण संरक्षण की दिशा में कुछ प्रयास करने में अहम साबित हुआ।
- पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986, (संशोधित 1991)
- वन नीति 1988
- सार्वजनिक देयता बीमा अधिनियम, 1991 संशोधित, 1992
- पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम, 1996
- राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलीय प्राधिकरण अधिनियम, 1997
- वन्य जीव (संरक्षण) संशोधन अधिनियम, 2002
- जैव विविधता अधिनियम, 2002

ISSN 2348-3857

भारत सरकार द्वारा समय-समय पर घोषित नीतियाँ व कार्यक्रम

- पर्यावरण और विकास पर राष्ट्रीय संरक्षण व नीतियाँ
- तटीय विनियमन क्षेत्र अधिसूचना, 1991 और 2011
- खतरनाक रसायनों का निर्माण, भंडारण और आयात नियम, 1989
- बोयोमेडिकल वेस्ट (प्रबंधन और हैंडलिंग) नियम, 1998
- पर्यावरण मंजूरी विनियम, 2006

भारत में हरित संघवाद और व्यवहार में प्रयोग

संसद द्वारा पारित राष्ट्रीय पर्यावरण कानूनों के आधार पर, भारत में राज्यों ने भी पर्यावरण के संरक्षण के लिए विभिन्न प्रकार के कानून पारित किए हैं। राज्य सूची के तहत 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन के साथ ही पंचायतों व नगरपालिकाओं को सत्ता का हस्तांतरण किया है। पर्यावरण सम्बन्धी चिन्ताओं को दूर करने के लिए पर्यावरण संघवाद की अवधारणा ने आकार लिया। संविधान की 11वीं अनुसूची पंचायतों को सामाजिक वानिकी और कृषि वानिकी, लघुवनोपज, जल प्रबंधन, मृदा अपरदन, ईंधन व चारे के अधिकार प्रदान करती है। संविधान की 12वीं अनुसूची, नगरपालिकाओं को पर्यावरण को पर्यावरण, स्वच्छता, सार्वजनिक स्वास्थ्य आदि के संरक्षण में अधिकार देती है। भारत में अदालतों ने विभिन्न न्यायिक निर्णयों ने पर्यावरण के संरक्षण के लिए की बेहतरी में सक्रिय रूप से मदद की और आगे का मार्ग प्रशस्त किया। पर्यावरण नियमों और विनियमों के उचित कार्यान्वयन के लिए सरकार के विभिन्न स्तरों को सत्ता का हस्तांतरण किया है। पर्यावरण पर न्यायिक सक्रियता परिणामस्वरूप भारत में पर्यावरण संघवाद के नए युग की शुरूआत हुई। जनहित याचिका के माध्यम से गैर सरकारी संगठनों, सामुदायिक समूहों और जन उत्साही व्यक्तियों के प्रयासों के कारण एक नये अध्याय की शुरूआत हुई।[4] भारत में पर्यावरण के मामले जैसे—एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ, 1987, नर्मदा बाघ विरोध संघर्ष समिति बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 1992, यूनियन कार्बाइड कार्पोरेशन बनाम भारत संघ, भारत संघ बनाम कमलनाथ, 1997, आदि है। पर्यावरण मुद्दों पर विकेन्द्रीकृत नीति निर्माण भारत में पर्यावरणीय सक्रियता के परिणामस्वरूप नए आयाम स्थापित किए। गैर-सरकारी संगठनों और पर्यावरण कार्यकर्ताओं के नेतृत्व में एक नई तरह की पर्यावरण राजनीति का भी उदय हुआ। हरित संघवाद केन्द्र और राज्य दोनों अपने-अपने शक्तियों का प्रयोग परस्पर आपसी सहमति से बने पर्यावरणीय कानूनों के क्रियान्वयन से है। स्वतंत्रता के बाद भारत ने विकास का जो आयाम अपनाया उसके परिणामस्वरूप भारत में विकास के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन भी हुआ। अत: पर्यावरण संघवाद में विकास व प्रशासन को एक नया आयाम मिलेगा।[5]

अन्य संघात्मक शासन प्रणाली वाले देशों में भी हरित संघवाद की अवधारणा पिछले कुछ दशकों में मजबूती से उभरी है जैसे कनाड़ा में वानिकी के लिए एक प्रांतीय दृष्टिकोण अपनाया है। अर्जेंटीना में 23 में से 14 प्रांतों ने पर्यावरण कानून बनाए हैं अन्य विकासशील देश ब्राजील ऐसे चरणों से गुजरा है जो न तो लगातार केंद्रीकरण में से एक है न ही लगातार विकेंद्रीकरण। फिर भी पर्यावरण के प्रति सजग है। हालांकि वर्तमान ब्राजील के संविधान ने पर्यावरण की रक्षा के लिए संघीय, राज्य और नगरपालिका सरकारों को समवर्ती शक्तियाँ देता है इस सहमति ने तनाव को जन्म दिया है। खासकर अमेजन के जंगलों के मामले में फिर भी पर्यावरण के प्रति वहाँ केन्द्र व राज्य दोनों मिलकर प्रयासरत है। अमेरिका में, जहाँ संघीय सरकार में अभी तक जलवायु परिवर्तन के सम्बन्ध में संवैधानिक प्रावधानों का ज्यादा उपयोग नहीं किया है। परन्तु राज्य इस सम्बन्ध में अपने स्वयं के नियमों और विनियमों को प्रख्यापित करने के लिए स्वतंत्र है। राज्य शहरों और कुछ क्षेत्रीय सहयोग से जलवायु नीति के प्रति अधिक सजग है। विभिन्न संघीय प्रणालियों में पर्यावरण पर कानूनों को देखें तो पर्यावरण क्षेत्राधिकार का सीमांकन नहीं करते हैं, वहाँ पर संघीय और प्रांतीय कानून बड़े पैमाने पर पर्यावरण के प्रति उनके दृष्टिकोण को नियंत्रित करते हैं। हालांकि प्रत्येक देश की संवैधानिक संरचना यह निर्धारित करती है कि कैसे इन समस्याओं से निपटा जा सके। जैसे वर्तमान में नए ब्राजीलियाई वन संहिता की चर्चा की जा रही है। पर्यावरण और संघवाद सिद्धांत में 'पर्यावरण' शब्द मुख्य रूप से हमें उन सभी परिस्थितियों और प्रभावों के बारे में सजग करता है जो एक जीवित जीवन के विकास के लिए आवश्यक प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए आवश्यक है।[6]

इसी क्रम में भारत में ऊर्जा और संसाधन संस्थान, (TERI) ने (जिसे पहले टाटा एनर्जी रिसर्च इंस्टीट्यूट के नाम से जाना जाता था, एक शोध संस्थान है, जो ऊर्जा, पर्यावरण व सतत विकास के क्षेत्र में अपनी शोध गतिविधियों पर ध्यान केन्द्रित करता है) अन्तर्राज्यीय परिषद सचिवालय, पर्यावरण और वन मन्त्रालय, विश्व बैंक के सहयोग से 29-30 अक्टूबर 2012 को दो दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया। इस सम्मेलन का उद्घाटन भारत के माननीय उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी द्वारा किया गया। इसमें अर्जेंटीना, ब्राजील, कनाडा, भारत, नाइजीरिया और संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे संघीय शासन वाले देशों सहित 16 से अधिक देशों में प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसमें इस बात पर जोर दिया गया कि अधिकांश संघीय संविधान पर्यावरण की दृष्टि से कैसा है। हरित संघवाद की चर्चा को सतत विकास के साथ मेल करने की आवश्यकता है। हरित संघवाद पर केन्द्र व राज्य दोनों को साथ कार्य करने की आवश्यकता है शासन की ऐसी स्थिति बनाना आवश्यक है जिसमें एक व्यक्ति और समुदाय को अपने जीवन, संसाधनों और पर्यावरण के साथ सम्बन्धों को मजबूत करने की आवश्यकता है।[7]

भारत सरकार ने पर्यावरण संरक्षण के लिए राष्ट्रीय और राज्य दोनों सरकारों की भागीदारी को आवश्यक बनाकर स्थानीय स्थितियों व रचनात्मक समाधान के लिए अन्तर-सरकारी हस्तांतरण पर जोर देने की आवश्यकता पर सम्मेलन में बल दिया गया। संघवाद के विभिन्न मॉडलों और पर्यावरण मूल्याँकन के प्रति उनके दृष्टिकोण का एक सिंहावलोकन प्रस्तुत किया गया। कनाडा और संयुक्त राज्य अमेरिका बड़े पैमाने पर द्वैतवादी संघ है और आस्ट्रेलिया और जर्मनी एकीकृत संघ है, भारत और स्विट्जरलैण्ड में मजबूत विशेषताएँ हैं, दोनों मॉडल में यह परिभाषित नहीं किया गया कि पर्यावरण कहा रखा जाए।[8]

पिछले वर्षों में वैश्विक आर्थिक विकास के साथ पर्यावरण में गिरावट आयी है लेकिन वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद दोगुने से अधिक हो गया है जबकि विश्व का 60 प्रतिशत पारिस्थितिक तंत्र खराब हो गया है। पर्यावरण विभिन्न माध्यमों से विकास के पहलुओं के साथ अन्त:क्रिया करता है। जैसे उपभोग के लिए संसाधनों का एक स्रोत, बुनियादी जीवन-रक्षक सेवाओं की आपूर्ति, और कचरे को आत्मसात करना। इसलिए पर्यावरणीय स्थिरता को सामाजिक प्रगति और आर्थिक विकास के साथ-साथ मानव विकास के एक महत्त्वपूर्ण स्तंभ के रूप में देखा जाता है। पर्यावरणीय विकास के मजबूत समर्थन के बिना व्यवस्था अस्थिर हो जाएगी और सतत विकास नहीं होगा।[9]

वैश्विक स्तर पर पर्यावरण एक अहम मुद्दा है और जलवायु परिवर्तन वैश्विक समाज के सामने मौजूद सबसे बड़ी चुनौती है। आँकड़े दर्शाते हैं कि 19वीं सदी के अन्त से अब तक पृथ्वी की सतह का तापमान लगभग 1.62 डिग्री बढ़ गया है। वर्ष 2100 तक भारत समेत अमेरिका, कनाड़ा, जापान, न्यूजीलैंड, रूस और ब्रिटेन सभी देशों की अर्थव्यवस्थाएँ जलवायु परिवर्तन के असर से अछूती नहीं रहेंगी। कुछ समय पूर्व कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की एक शोध टीम ने 174 देशों में वर्ष 1960 के बाद जलवायु सम्बन्धी आँकड़ों का अध्ययन किया गया है और पाया कि पृथ्वी पर 1.5 डिग्री सैल्सियस से अधिक तापमान की स्थिति में विभिन्न देशों की अर्थव्यवस्थाओं के साथ-साथ मानव अस्तित्व पर भी खतरा उत्पन्न हो जाएगा। इसके अतिरिक्त पिछली सदी से अब तक समुद्र के जल स्तर में भी लगभग 8 इंच की बढ़ोतरी दर्ज की गई है। वहीं संयुक्त राष्ट्र आपदा जोखिम न्यूनीकरण कार्यालय के अनुसार भारत को जलवायु परिवर्तन के कारण हुई प्राकृतिक आपदाओं से वर्ष 1998-2017 के बीच की समयावधि के दौरान लगभग 8,000 करोड़ जनता को आर्थिक क्षति का सामना करना पड़ा। जलवायु परिवर्तन के प्रमुख कारण में प्राकृतिक व मानवीय गतिविधियाँ दोनों ही समाहित हैं। प्राकृतिक गतिविधियों में महाद्वीपीय संवहन, ज्वालामुखी विस्फोट, पृथ्वी का झुकाव, समुद्री धाराएँ तथा मानवीय गतिविधियों में शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, वनोन्मूलन, रासायनिक कीटनाशकों एवं उर्वरकों का प्रयोग आदि हैं। जलवायु परिवर्तन से वर्षा पर प्रभाव पड़ा है, समुद्री जल स्तर पर प्रभाव, कृषि, जैव विविधता, मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ा है। वैश्विक स्तर पर जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए जलवायु परिवर्तन पर अन्तर सरकारी पैनल (IPCC) बनाया गया, जिसका उद्देश्य जलवायु परिवर्तन, उसके प्रभाव और भविष्य में सम्भावित जोखिमों के साथ-साथ अनुकूलन तथा जलवायु परिवर्तन को कम करने हेतु तथा नीति-निर्माताओं को रणनीति बनाने के लिए नियमित वैज्ञानिक आकलन प्रदान करता है। आईपीसीसी आकलन सभी स्तरों पर सरकारों को वैज्ञानिक सूचनाएँ प्रदान करता

है जिसका उपयोग जलवायु के प्रति उदार नीति विकसित करने के लिए किया जा सकता है।

संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन (UNFCCC)—यह एक अन्तर्राष्ट्रीय समझौता है जिसका उद्देश्य वायुमंडल में ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को नियंत्रित करना है। वर्ष 1995 से UNFCCC की वार्षिक बैठकों का आयोजन किया जाता है। इसके तहत ही वर्ष 1997 में बहुचर्चित क्योटो समझौता हुआ और विकसित देशों (एनेक्स-1 में शामिल देश) द्वारा ग्रीनहाउस गैसों को नियंत्रण करने के लिए लक्ष्य तय किये गये। क्योटो प्रोटोकॉल के तहत 40 औद्योगिक देशों को अलग सूची एनेक्स-1 में रखा गया है।

पेरिस समझौता (2015) जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय समझौता है। ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लक्ष्य के साथ सम्पन्न 32 पृष्ठों एवं 29 लेख वाले पेरिस समझौते को ग्लोबल वार्मिंग को रोकने के लिए ऐतिहासिक समझौते के रूप में मान्यता प्राप्त है।

COP-25 सम्मेलन में लगभग 200 देशों के प्रतिनिधियों ने उन गरीब देशों की मदद करने के लिये एक घोषणा का समर्थन किया जो जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से जूझ रहे हैं। इसमें पेरिस जलवायु परिवर्तन समझौते के लक्ष्यों के अनुरूप पृथ्वी पर वैश्विक तापन के लिए उत्तरदायी ग्रीन हाउस गैसों में कटौती के लिए ''तत्काल आवश्यकता'' का आह्वान किया गया।

COP-26, 13 नवम्बर 2021 को ग्लासगो में एक नए समझौते पर सहमति व्यक्त की, जिसे ग्लासगो जलवायु संधि के रूप में जाना जाता है जिसका उद्देश्य खतरनाक जलवायु परिवर्तन को रोकना है। यह समझौता पूर्व-औद्योगिक स्तरों से ऊपर वैश्विक औसत तापमान में वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस से नीचे रखने के पेरिस समझौते के तापमान लक्ष्य की पुष्टि करता है तथा इससे पूर्व औद्योगिक स्तरों से उपर तापमान वृद्धि को 1.5 डिग्री सेल्सियस तक सीमित करने के लिए प्रयासों का अनुसरण करता है। उसमें 140 से अधिक देशों ने शुद्ध-शून्य उत्सर्जन तक पहुँचने का संकल्प लिया है। ब्राजील सहित 100 से अधिक देशों ने 2030 तक वनों की कटाई को उलटने का संकल्प लिया। ग्लासगो क्लाइमेट पैक्ट के अन्तिम अध्याय में कहा गया है कि अकुशल जीवाश्म ईंधन सब्सिडी को चरणबद्ध तरीके से समाप्त करने की दिशा में प्रयास तेज करना भी शामिल है। भारत ने 2030 तक अक्षय ऊर्जा स्रोतों से अपनी ऊर्जा आवश्यकता का आधा हिस्सा लेने और 2070 तक कार्बन तटस्थता हासिल करने का वादा किया है। जलवायु परिवर्तन के शमन और अनुकूलन के लिए वित्तीय मदद के लिए नई घोषणा की गई है।

भारत में जलवायु परिवर्तन और प्रयास

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन वैश्विक से लेकर स्थानीय स्तर तक अपने बहुस्तरीय चरित्र में यह एक अभूतपूर्व परिदृश्य है। वस्तुतः कई मायनों में यह हमारी समस्त समस्याओं में सबसे तात्कालिक है। वर्तमान संदर्भ में भारत की बात करें तो जलवायु परिवर्तन पर पेरिस समझौता वर्ष 2020 से कार्यान्वित होने के लिए विचार विमर्श शुरू होने के साथ अनुपालन की दिशा में कदम बढ़ाए जा रहे हैं। भारत वैश्विक कार्बन उत्सर्जन में 6.7 प्रतिशत का योगदान करता है इस दिशा में गम्भीर रूख अख्तियार करते हुए आवश्यक कार्यवाही की जा रही है।

अनुकूलन और शमन

भारत को जलवायु परिवर्तन को और अधिक गम्भीरता से देखने की आवश्यकता है, विशेष रूप से इसके प्रति अनुकूलन के विषय में, क्योंकि वास्तविक रूप से इसके संदर्भ में चिन्ता के कई अहम कारण है।

जलवायु परिवर्तन के शमन के विषय में भी भारत को सावधान रहना होगा क्योंकि देश ''निम्न कार्बन एजेंडा'' तथा ''विकास एजेंडा'' के बीच अवसरों के दायरे को पूरी तरह से खोजने के लिए सफल नहीं हो पाये।

भारत में अभी आधारभूत संरचना के विकास की कमी है इसके लिए ''विकास बनाम अनुकूलन'' को समझना होगा और आकलन करना होगा कि देश को कितना और किस प्रकार के शमन करने की आवश्यकता है। भारत के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता भविष्य के लिए 'हेजिंग' (hedging) की है। भारत की समस्या भविष्य के हेंजिग वित्तीय जोखिम को कम करने या समाप्त करने के लिये डिजाइन की गई कोई भी तकनीक; उदाहरण के लिए दो ऐसी स्थितियों का निर्माण करना जो मूल्य परिवर्तन पर एक-दूसरे को प्रति-सन्तुलित करती है, कि महज इसकी कि हम अभी क्या उपयोग कर रहे हैं अथवा तात्कालिक रूप से क्या प्राप्त करने की अपेक्षा रखते हैं। भले ही राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान में भारत का प्रदर्शन अच्छा रहा है, विशेषकर तब

जब तक कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी इन प्रतिबद्धताओं के संदर्भ में कोई विशेष प्रभावी एवं गम्भीर कार्यवाही अथवा प्रदर्शन देखने को नहीं मिलता है।

जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना का शुभारंभ वर्ष 2008 में किया गया था। इस कार्य योजना में 8 मिशन शामिल हैं जैसे राष्ट्रीय सौर मिशन, विकसित ऊर्जा दक्षता के लिये राष्ट्रीय मिशन, सुस्थिर निवास पर राष्ट्रीय मिशन, राष्ट्रीय जल मिशन सुस्थिर हिमालय पारिस्थितिक तंत्र हेतु राष्ट्रीय मिशन, जलवायु परिवर्तन हेतु रणनीतिक क्षेत्र पर राष्ट्रीय मिशन शामिल है।

अन्तर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन—सौर ऊर्जा से सम्पन्न देशों का एक संधि आधारित अन्तर-सरकारी संगठन है जिसकी शुरूआत भारत और फ्रांस ने 30 नवम्बर 2015 को पेरिस जलवायु सम्मेलन के दौरान की थी। इसके प्रमुख उद्देश्यों में वैश्विक स्तर पर 1000 गीगावाट से अधिक सौर ऊर्जा उत्पादन क्षमता प्राप्त करना और वर्ष 2030 तक सौर ऊर्जा में निवेश के लिए लगभग 1000 बिलियन डॉलर की राशि को जुटाना शामिल है।

राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलीय प्राधिकरण और राष्ट्रीय हरित अधिकरण—इसकी स्थापना राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलीय प्राधिकरण अधिनियम 1997 के तहत केन्द्र सरकार द्वारा की गई थी। एनईएए की स्थापना उन क्षेत्रों में लगाए गए प्रतिबंध के सम्बन्ध में अपील सुनने के लिये की गई थी जिसमें पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के तहत कुछ सुरक्षा उपायों के अधीन कोई उद्योग या प्रक्रिया का संचालन नहीं किया जाएगा।

कुछ अन्य अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास हैं जिसमें भारत भी शामिल है।

1. इंटरनेशनल ट्रॉपिकल टिम्बर एग्रीमेंट (आईटीटीए), 1983 द्वारा स्थापित आईटीटीए वर्ष 1985 में स्थापित हुआ और वर्ष 1 जनवरी 1997 में प्रभाव में आया। 37 सदस्य देश हैं।
2. ओजोन परत को नष्ट करने वाले पदार्थों पर वियना कन्वेंशन (1985) के लिये मोन्ट्रियल प्रोटोकॉल 1987
3. रॉटरडैम कन्वेंशन, 1998
4. जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेशन
5. जैव विविधता पर कन्वेशन (सीबीडी) 1992
6. मरूस्थलीकरण का मुकाबला करने के लिये संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन, (यूएनसीसीडीडी 1994)

2015 में अनुमोदित, **2030 एजेंडा और उसमें 17 सतत विकास लक्ष्य,** इन चुनौतियों और इनके अन्तरसम्बन्धों के समाधान के लिए संपूर्ण और सामंजस्यपूर्ण फ्रेमवर्क प्रदान करते हैं का भारत भी अनुमोदन करता है तथा नीति आयोग इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न क्षेत्रों में कार्य कर रहा है। इनके अन्तर्गत सदस्य राष्ट्रों को सतत विकास के सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय पहलुओं का समाधान सन्तुलित ढंग से करना होगा। इन पर अमल करते हुए समावेशन और एकीकरण तथा किसी को पीछे छूटने न देने के सिद्धान्त का पालन अनिवार्य है। जैसा कि प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी ने कहा ''एजेंडा 2030 के पीछे की हमारी सोच जितनी ऊँची है हमारे लक्ष्य भी उतने ही समग्र है। इनमें उन समस्याओं को प्राथमिकता दी गई है जो पिछले कई दशकों से अनसुलझी है और इन लक्ष्यों से हमारे जीवन को निर्धारित करने वाले सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय पहलुओं के बारे में हमारी विकसित होती समझ की झलक मिलती है। मानवता के 1/6 हिस्से के सतत विकास का विश्व और हमारे सुंदर पृथ्वी के लिए बहुत गहरा असर होगा।''

1987 में पर्यावरण और विकास पर सुझाव देने हेतु गठित आयोग जिसका नाम ब्रन्टलैण्ड आयोग था, ने सबसे पहले धारणीय विकास की परिभाषा दी। 2016 के बजट में धारणीय विकास लक्ष्य को पूरा करने के लिए राष्ट्रीय ग्राम स्वराज अभियान नामक योजना लाई गई जिसके तहत सरकार ने 655 करोड़ रुपये दिए। इसके तहत पंचायती राज संस्थाओं के गवर्नेंस संरचना में सुधार किया गया। इससे पहले सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्य 2000 में लाये गये थे इसके 8 लक्ष्य थे तथा एसोसिएटेड टारगेट की संख्या 18 थी। ब्राजील के रियो डी जनेरियो शहर में 1992 में पृथ्वी सम्मेलन हुआ। इसके 20 वर्ष बाद 2012 में RIO + 20 के नाम से सम्मेलन हुआ जहाँ यह तय हुआ कि क्योटो प्रोटोकॉल 2020 तक जारी रखेंगे। सितम्बर 2015 में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा सतत विकास लक्ष्य घोषित किए गए जो 2030 तक प्राप्त करने हैं जिसको शुरू करने की तिथि 1 जनवरी 2016 थी।[9]

उल्लेखनीय है कि इसको प्राप्त करने में राज्य पहली इकाई है तथा राज्य व केन्द्र दोनों अपने-अपने स्तर पर भारत में हरित संघवाद को मजबूत करने की दिशा में प्रयासरत है ताकि पर्यावरण के साथ-साथ आर्थिक विकास प्राप्त कर सके। हाल ही में न्यूजीलैंड ने वित्तीय फर्मों के लिए जलवायु

परिवर्तन पर एक बिल पेश किया है। यह बिल विश्व में इस तरह का पहला बिल है न्यूजीलैंड ने कार्बन तटस्थ बनने की सीमा 2050 तय की है। इसी के समान अन्य संघीय देशों को भी हरित संघवाद की तरफ बढ़ाना होगा।

सुझाव

1. केन्द्र के साथ-साथ स्थानीय स्तर पर भी जलवायु परिवर्तन से सम्बन्धित योजनाओं का संचालन सुचारु रूप से किया जाये।
2. 14वें वित्त आयोग द्वारा वन क्षेत्र के आधार किये गये वित्त के आवंटन को बढ़ाया जाना चाहिए।
3. जिन राज्यों ने वन क्षेत्र को बढ़ाने की दिशा में सकारात्मक प्रयास किये हैं उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
4. हाल ही नीति आयोग ने पर्यावरण इंडेक्स जारी किया है जो प्रत्येक 6 माह के अन्तराल में जारी किया जाना चाहिए।
5. जिन क्षेत्रों में वन प्रतिशत कम रहा उनकी कमी की वजह जानकर उसे दूर करने का प्रयास किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

हरित संघवाद के अनुभव को व सतत विकास सरकारों और समुदायों के सभी स्तरों तक ले जाने की आवश्यकता है। पर्यावरण के विभिन्न घटक जिनमें शामिल हैं—वायु, जल, भूमि और इनके बीच अन्तर्सबंध ये केन्द्र सरकार, राज्य सरकारों या दोनों के दायरे में आते हैं। बेहतर पर्यावरण के लिए नीतियों को डिजाइन और कार्यान्वित करने के लिए राष्ट्रीय, उप-राष्ट्रीय और स्थानीय स्तरों के बीच समन्वय और सहकारी संघवाद को मजबूत करने की आवश्यकता है। एक संघीय संदर्भ में पर्यावरणीय प्रभाव व इसके लिए तकनीकी व वित्तीय क्षमता, मुद्दों की स्पष्ट समझ के प्रति सरकार हमेशा समान स्तर पर तैयार नहीं होती। वास्तविक चुनौती ऐसी नीतियाँ बनाने में है जो इन मतभेदों की सराहना करती है, फिर भी उनके द्वारा क्रियान्वित नहीं है। ये चुनौतियाँ सभी संघीय प्रणालियों में अलग-अलग रूपों में मौजूद है। पर्यावरण संरक्षण के लिए राष्ट्रीय व राज्य सरकारों दोनों की भागीदारी आवश्यक है। केन्द्र सरकार को आर्थिक स्तर पर, विभिन्न विधान पारित करके व तकनीकी सहायता के माध्यम से व राज्य सरकारों की सूचना व स्थानीय परिस्थितियों में केन्द्र की सहायक की भूमिका निभाकर पर्यावरणीय चुनौतियों से निपटने के लिए सक्षम होना है। इस प्रकार हरित संघवाद सहायता और केंद्रीय सिद्धांतों के बीच सन्तुलन बना सकता है।

भारतीय संदर्भ में पर्यावरण संघवाद, समाज के विभिन्न समूहों से लेकर जमीनी स्तर तक पर्यावरणीय सक्रियता और आबादी के विभिन्न क्षेत्रों में विरोध के माध्यम से सत्ता का सही हस्तान्तरण है। पर्यावरणीय नीति निर्माण और इसके कार्यान्वयन के सम्बन्ध में सत्ता के हस्तांतरण पर अभी भी केन्द्र सरकार और इसके संस्थागत तंत्रों का वर्चस्व है। अत: इसकी स्थानीय शासन तक पहुँच के लिए हरित संघवाद की अवधारणा को मजबूत करना होगा।

संदर्भ सूची

1. बसु, दुर्गादास, भारत का संविधान, एक परिचय, लेक्सस-नेक्सस पब्लिकेशन, 1998, पृ.सं. 1-50
2. एडलर, जे.एच.ए., न्यू एनवायरमेंट फेडरलिज्म, फोरम ऑफ एप्लाइड रिसर्च एण्ड पब्लिक पॉलिसी, रूटलेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1998, पृ.सं. 100
3. व्येमर, के.सी., फेडरल गवर्नमेंट, लंदन, 1963, पृ.सं. 90-100
4. चक्रवर्ती, पी.जी. धर, एव निधि श्रीवास्तव, ग्रीन फेडरलिज्म: एक्सपीरियंस प्रेक्टिसेज टेरी: ए एनर्जी रिसोर्स इंस्टीट्यूशन एण्ड फोरम ऑफ फडरेशन, नई दिल्ली, 2015, पृ.सं. 50-100
5. फर्बर, डी.ए., एनवायरमेंटल फेडरलिज्म इन एन ग्लोबल इकोनॉमी, वर्जीनिया ला रिव्यू, 1997, पृ. 83,
6. अय्यर, आर.आर., संघवाद और जल संसाधन, इकोनॉमी एण्ड पॉलिटिकल वीकली, 29(13), 1994
7. सिंह, एम.पी., इवार्डस ए मोर फेडरलाइज्ड पार्लियामेंट्री सिस्टम इन इंडिया: एक्सप्लेनिंग फंक्शनल चेंज, पैसिफिक अफेयर्स, नई दिल्ली, 2001, पृ.सं. 74
8. एचटीटीपी://ईपेपर.दहिन्दू.कॉम